International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 02-03-2022, Accepted: 17-03-2022, Published: 01-04-2022
Volume 8, Issue 2, 2022, Page No. 54-56

हिन्दी कथा–साहित्य के सर्जनात्मक प्रतिभा–श्री भैरवप्रसाद गुप्द

राजू सी. पी
अध्यक्ष, हिंदी विभाग, सेंट अलोष्यस कॉलेज, एलत्तुरुत्त, तृश्शूर, केरल, भारत

सारांश
(हिन्दी साहित्य में अनेक नये–नये लेखक उभरकर सामने आये हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाया है। उन उभरते हुए लेखकों में एक महत्वपूर्ण नाम है – भैरवप्रसाद गुप्त। उन्होंने प्रेमचन्द की यथार्थवादी परंपरा को, यशपाल के बाद समकालीन सन्दर्भों में आगे बढ़ाने का अतुल्य प्रयास किया है। सन् 1943 में प्रकाशित 'कसौटी' एकांकी संग्रह के प्रकाशन से लेकर उनके मरणोपरान्त सन् 1997 में प्रकाशित महत्वपूर्ण उपन्यास 'छोटी सी शुरुआत तक', पचास सालों से भी अधिक की अवधि में उन्होंने प्रेमचन्द की तरह देश की शहरी और ग्राम जीवन के बहुविध और जटिल हुए यथार्थ का विश्वसनीय चित्र प्रस्तुत किए हैं। अपने समय की जटिलताओं को पहचानकर, बहुलता का साहित्य समकालीन संदर्भ में लिखने का जो साहस उनमें दिखाई पड़ता है वह सराहनीय हैं। गुप्तजी हिन्दी साहित्य के एक बहुमुखी प्रतिभावान कलाकार हैं। बहुमुखी प्रतिभा इसलिए कहा जाता है कि वे हिन्दी साहित्य के पद्य विधा को छोड़कर प्रायरू सभी गद्य विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। हिन्दी साहित्य जगत के अमर साहित्यकार श्री भैरवप्रसाद गुप्त, हिन्दी साहित्य के ही नहीं, सम्पूर्ण भारतीय साहित्य की असाधारण सर्जानात्मक प्रतिभा के प्रतीक हैं।)

मूल शब्दः सर्जनात्मक प्रतिभा, श्री भैरवप्रसाद गुप्द, कथा–साहित्य

प्रस्तावना

भैरवप्रसाद गुप्त का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के एक छोटे से गाँव सिवानकलाँ में 7 जुलाई 1918 को मध्यवर्गीय परिवार में हुआ। गुप्तजी के पिता का नाम चरित्रराम और माता का नाम गंगादेवी था। चरित्रराम चीनी कारखाने में काम करते थे। उसके साथ ही तंबाकू का भी व्यापार करते थे। माता श्रीमती गंगादेवी पति परायण एवं धर्मनिष्ठ महिला थी। गंगादेवी के चार संतानें थीं, जिसमें तीन पुत्र और एक पुत्री थी। तीन पुत्रों में छोटा पुत्र भैरव प्रसाद गुप्त माँ का लाड़ला बेटा था। गुप्तजी की प्राथमिक शिक्षा अपने गाँव सिवानकलाँ में ही शुरु हुई थी। गाँव के महाजनी स्कूल की पढ़ाई केबाद इस्लामिया स्कूल में दर्जा चार तक की पढ़ाई की। उसके बाद उन्होंने गाँव से दो मील दूर पर स्थित सिकन्दरपुर गाँव के स्कूल से मिडिल पास किया। आगे की पढ़ाई के लिए भैरवप्रसाद गुप्त को इर्विंग क्रिश्चिन कॉलेज इलाहाबाद में जाना पड़ा। वहाँ शिवदान सिंह चौहान, जगदीश चन्द्र माथुर, गंगा प्रसाद पाण्डेय और राजा बल्लभ ओझा आदि के संपर्क में आए। ये लोग हिन्दी साहित्य–परिषद् के सक्रिय कार्यकर्ता थे। इलाहाबाद और उन साथियों के बीच गुप्तजी की साहित्यिक और राजनीतिक अभिरुचियों का विकास हुआ। इलाहाबाद में स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर तक पढ़ाई हुई। अपने महाविद्यालयीन जीवन में गुप्तजी हिन्दी साहित्य–परिषद् का काम बड़ी गंभीरता से करते थे। निराला, बच्चन जैसे श्रेष्ठ कवियों से गुप्तजी का इसी समय संपर्क हुआ। प्रेमचंदजी को मिलने का सौभाग्य भी यहीं पर हुआ।

हिन्दी कथा–साहित्य में प्रेमचन्द की परंपरा को आगे बढ़ानेवाले यथार्थवादी कथाकार के रूप में गुप्तजी विख्यात हैं। प्रेमचन्द से प्रभावित होकर ही उन्होंने लिखना शुरु किया था। हिन्दी कथा–साहित्य में प्रेमचन्द किस उद्देश्य से अपनी रचनाएँ रची थीं उसी उद्देश्य से गुप्तजी भी अपनी तूलिका चलायी है। गुप्तजी का कहना है मुझे प्रेमचन्द से प्रेरणा मिली थी। मैं उन्हीं के जैसे सुधारवादी गाँधीवादी था। लिखता था प्रेमचन्द से प्रभावित होकर जिस तरह प्रेमचन्द ने लिखा था–देश की स्वतंत्रता में सहाय करने वाला साहित्य1। गुप्तजी अपने साहित्य द्वारा मानव जीवन सार्थक बनाना चाहते थे। उनके साहित्य सृष्टि का उद्देश्य भी यही रहा। उनके अनुसार सार्थक का मतलब है मनुष्य का समय सिर्फ रोजी रोटी कमाने में ही खर्च नहीं होना चाहिए बल्कि सांस्कृतिक क्रिया–कलापों में लगाने का अवकाश भी मिलना चाहिए। आज हमारे देश में यह स्थिति है कि करोड़ों लोग सिर्फ इसी सोच में हैं कि मैं कैसे कमाऊँगा और कैसे खाऊँगा। वास्तव में यह स्थिति कोई ठीक नहीं है। पूँजीवादी व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो मनुष्य को पैसे का गुलाम बना देती है। पैसे कमाना छोड़कर कुछ नहीं कर सकता। मैं इस जीवन को जीवन नहीं समझता। जिसके लिखने से देश तथा समाज का उद्धार हो सके ऐसे जीवन की ओर ले जानेवाला साहित्य लिखना ही मेरे साहित्य का उद्देश्य है [2]।

मार्क्सवाद की प्रेरणा गुप्तजी स्वयं स्वीकार करते हैं। इस संबन्ध में डॉ.सुनन्दा पालकर का कथन है–शुरु में लेखक देश की आजादी के बारे में अथवा अछूत समस्या, जाति–पाँति की समस्याओं के बारे में लिखता था, क्यों कि वह गाँधीजी के रचनात्मक कार्य का युग था। लेकिन जब से गुप्तजी मार्क्सवाद के संपर्क में आये तब से उसे एक मिशन के रूप में उन्होंने स्वीकार किया। समाजवादी विचारधारा की ओर पाठकों को चलने की प्रेरणा देने के लिए लिखते रहे। पाठकों को सामाजिक और राजनीतिक चेतना से प्रेरित करना गुप्तजी का साहित्य सृजन का प्रमुख उद्देश्य है[3]। गुप्तजी के साहित्य सृजन का मूल उद्देश्य पाठकों को समाजवादी क्रान्ति की ओर अग्रसर करना है। वे जो कुछ भी लिखते थे वह समाजवाद के लिए ही होता था। इस पर विचार करते हुए गुप्तजी कहते हैं–जो भी लिखा जाय, पाठकों की रुचि के परिष्कार के लिए किया जाय, उनकी चेतना का विकास किया जाय, पाठकों की रुचि के लिए किया जाय, परेशानियों को समझा जाय,

परेशानियाँ क्यों है, इसके बारे में विचार किया जाय। मैं तो कहता हूँ कि जो भी कुछ किया जाय समाजवाद के लिए ही किया जाय। सबसे महान उद्देश्य तो यह है कि, क्रान्ति के लिए ही लिखा जाय[4]।

भैरवप्रसाद गुप्त के उपन्यासों का सर्वेक्षण करते समय हमें यह पता चलता है कि भैरवप्रसाद गुप्त एक प्रसिद्ध समाजवादी उपन्यासकार है। उपन्यास क्षेत्र में गुप्तजी का पदार्पण सन् 1946 में 'शोले' उपन्यास से हुआ। वैसे इसके पूर्व एकांकी तथा कहानियों का एक–एक संग्रह छप चुका था, लेकिन वस्तुतरू 'शोले' उपन्यास से ही उन्होंने हिन्दी साहित्य में अपनी पहचान बनाई। शोले के बाद उन्होंने हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में सक्रिय रहे और लगातार सन् 1995 में अपनी मृत्यु तक 17 उपन्यास लिखते रहे। सर्वहारा वर्ग को विशिष्ट सामाजिक परिस्थिति में क्रान्ति का मार्ग दिखाने का ऐतिहासिक कार्य गुप्तजी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से करने का प्रयास किया है। गुप्तजी का आखिरी उपन्यास 'छोटी सी शुरुआत' सन् 1997 में उनके मृत्यु के बाद ही प्रकाशित हुआ। जब–जब उनके यहाँ एक ही उपन्यास या कहानी एकाधिक परिवर्तित नामों में प्रकाशित होने के कारण उनके नामों और संख्या को लेकर कुछ भ्रम की स्थिति भी रही हैं। फिर भी साहित्य के स्रोत से मिले हुए जानकारी के अनुसार गुप्तजी के कुल सत्रह उपन्यास हैं जिनका नाम और प्रकाशन वर्ष इस प्रकार है। शोले(1946), मशाल (1948), लपटें (1951), गंगा मैया (1952), जंजीरें और नया आदमी (1954) यही उपन्यास 1970 में 'बाँधी' और 1982 में 'आग और आँसु' नाम से प्रकाशित), सतीमैया का चौरा (1959), धरती (1962), आशा (1963), कालिन्दी (1963), रंभा (1964) यही उपन्यास 1983 में 'सेवाश्रम' नाम से प्रकाशित), अन्तिम अध्याय (1970), नौजवान (1972) यही उपन्यास 1989 में 'नयी पीढ़ी' नाम से प्रकाशित), उसका मुजरिम (1972) यही उपन्यास 1980 में 'एक जीनियस की प्रेमकथा' नाम से प्रकाशित), काशी बाबू (1987), भाग्य देवता (1992), अक्षरों के आगे मास्टरजी (1993), छोटी सी शुरुआत 1997 (मरणोपरांत प्रकाशित)

आम तौर पर यह माना जाता है कि गुप्तजी मुख्यतरू उपन्यासकार हैं। यह शायद सही भी है क्योंकि आजादी के बाद के भारतीय समाज की केन्द्रीय समस्याओं को विस्तार से चित्रित करने के लिए उन्होंने उपन्यास विधा को ही प्रायरू अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। लेकिन उनकी कहानियों की संख्या भी कम नहीं है। पिछले साठ वर्षों में प्रतिष्ठित कहानीकारों ने जितनी कहानियाँ लिखी होगी, गुप्तजी की कहानियाँ संख्या में प्रायरू उनमें से प्रत्येक की कहानियों से अधिक होगी। करीब एक सौ से अधिक कहानियाँ उन्होंने लिख चुकी हैं। यही नहीं, उनकी कहानियों को तीखे सामाजिक व्यंग्य, निम्न मध्यवर्गीय जीवन में पायी जानेवाली पीड़ाओं के लिए गहरी सहानुभूति एवं चेतना तथा मूल राजनैतिक दृष्टि की स्पष्टता के लिए सार्थक मिसाल के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

एक कहानीकार की हैसियत से गुप्तजी की रचनात्मक सक्रियता उनकी कहानियों का पहला संग्रह सन् 1945 में प्रकाशित 'मुहब्बत की राहें' से होता है । गुप्तजी की कहानियों का परिवेश आजादी के पूर्व और बाद के समस्याग्रस्त समाज है, जिसमें ईमानदार और परिश्रमी लोगों के लिए हर कदम पर निराशा और पीड़ा ही उपस्थित रहती है। उनकी कहानियों की काफी संख्या के पात्र शहरों और कस्बों में रहते हुए अपने भविष्य के बारे में सपने देखते हैं तथा अपनी हैसियत के मुताबिक अनेक योजनाएँ बनाते हैं। गुप्तजी के कुल कहानी संग्रह 12 है। मुहब्बत की राहें (1945), फरिश्ता (1946) बिगड़े हुए दिमांग (1948), इंसान (1950), सितार का तार (1951), बलिदान की कहानियाँ (1951), मंजि□ल (1951), आँखों का सवाल (1952), महफिल (1958), सपने का अन्त (1961), मंगली की टिकुली (1982) आप क्या कर रहे हैं (1983)। इनके अलवा गुप्तजी की कहानी संग्रहों से चुनी गयी दस कहानियों को जोड़कर सन् 2008 में दस प्रतिनिधि कहानियाँ नाम से एक कहानी संग्रह लोकभारती प्रकाशन प्रकाशित कर चुके हैं।

जब हम हिन्दी कथा–साहित्य के विकास क्रम पर दृष्टिपात करते हैं तो हम पाते हैं कि एक समर्थ साहित्य विधा के रूप में हिन्दी कथा–साहित्य की प्रतिष्ठा का पूरा श्रेय मुंशी प्रेमचन्द को है। हिन्दी कथा–साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचन्द का उदय एक युग प्रवर्तक के रूप में होता है। उन्होंने हिन्दी कथा–साहित्य को एक नई दिशा दी, उसके लिए एक नवीन भूमि का निर्माण किया। उन्होंने अपने पूर्व के कथाकारों से जो कुछ भी विरासत के रूप में ग्रहण किया था, उसे संपन्न, समृद्ध और प्रौढ़ रूप देकर हिन्दी जगत् के समक्ष प्रस्तुत किया। प्रेमचन्द के समकालीन कतिपय अन्य कथाकार भी हैं जिन्होंने प्रेमचन्द के कथा–साहित्य की अनेक प्रवृत्तियों को आत्मसात करते हुए अपने कृतित्व का निर्माण किया। गहरे यथार्थ बोध और व्यापक सामाजिक चित्रण से जिस ध्येय को लेकर, प्रेमचन्द ने अपने कथा–साहित्य की सर्जना की थी, हिन्दी कथा–साहित्य मूलतरू इसी परंपरा को लेकर गतिशील हुआ। इस यथार्थ को आगे के कतिपय लेखकों की समाजवादी आस्थाओं ने और भी पुष्ट की।

भैरवप्रसाद गुप्त प्रेमचन्द की इसी परंपरा के उपज माने जा सकते हैं। वे प्रेमचन्द की परंपरा के आधुनिक युग में एक समर्थ दावेदार है। गुप्तजी के कथा–साहित्य निम्न मध्यवर्ग के जीवन को चित्रित करते हुए सामने आए। अपनी चित्रणगत तथा दृष्टिजन्य सीमाओं के बावजूद, जीवन के प्रति यह आसक्ति ही गुप्तजी का संबन्ध प्रेमचन्द और उनकी परंपरा से जोड़ती है। इस प्रकार प्रेमचन्द की परंपरा के विकास क्रम में गुप्तजी की भी विकासपूर्वक गणना की जा सकती है। आधुनिक जीवन के विविध समस्याओं के उद्घाटन में प्रेमचन्द के समान ही गुप्तजी सफल हुए हैं। आधुनिक जीवन के वैरुध्य का, उसकी विकृतियों का, उसकी समस्याओं तथा उसके भीतर चलने वाले विविध वर्गों का उन्होंने बहुत ही सजीव और सशक्त चित्रण किया है। स्पष्ट ही इस समूचे चित्रण में प्रेमचन्द की ही भाँति गुप्तजी ने भी सामान्य भूमिका के पात्रों को ही अपनी मानवीय संवेदना का अधिकारी बनाया है। यदि प्रेमचन्द के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन की विषमताओं के घिसते–पिटते हुए नर–जीवन की गहरी संवेदनाम्क अभिव्यक्ति मिली है, तो गुप्तजी के कथा–साहित्य में भी नागरिक जीवन की समूची घुटन के बीच किसी प्रकार के आगे की ओर बिगड़ते हुए मध्यवर्ग को उसकी सारी पीड़ा और आशा–आकांक्षाओं के साथ अभिव्यक्ति दी गयी है। गुप्तजी की कृतियाँ सजग सामाजिक चेतना के साथ–साथ उसके विशाल अनुभवों की भी परिचायक है। समाज और युग जीवन का अत्यन्त यथार्थ चित्र गुप्तजी ने अपने कथा–साहित्य में प्रस्तुत किया है।

समाजवादी साहित्यकार गुप्तजी प्रेमचन्दोत्तर युग के एक सशक्त कथाकार हैं। उन्होंने प्रेमचन्द की परंपरा को विकसित करने में अपना अमूल्य योगदान दिया है। गुप्तजी अन्य समाजवादी साहित्यकारों से पृथक दिखाई देते हैं। यशपाल, रंगेय राघव, राहुलजी, नागर्जुन, अमृत लाल नागर, अमृत राय आदि साहित्यकारों ने जिस प्रकार समाजवादी साहित्य की धारा

को अग्रसर करने में अपना योगदान दिया है, उसी प्रकार भैरव प्रसाद गुप्त भी समाजवादी कथा–साहित्य को समृद्ध करने में अग्रणी रहे हैं। उनके उपन्यासों एवं कहानियों की दृष्टि समाजवादी रही है। उनकी दृष्टि जन–जीवन की जागृत चेतना के साथ–साथ भविष्य की संभावनाओं को भी तलाश करती है। उन्होंने प्राचीन रूढियों, अत्याचारों, ह्वासोन्मुखी रीति–रिवाजों के चित्रण के साथ–साथ विकास शील नई सामाजिक प्रवृत्तियों का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है।

एक साहित्यकार के रूप में गुप्तजी अपने समाजवादी सिद्धांतों का आरोपण नहीं करते बल्कि वे कथा साहित्य की दृष्टि में समाजवाद का प्रवक्ता न बनकर जीवन की यथार्थता को खोजनेवाले अनुभव की अभिव्यक्ति देनेवाले माध्यम के रूप में स्वीकार करते हैं। डॉ.राजेन्द्र मोहन अग्रवाल ने भी गुप्तजी समाजवादी संवेदना से युक्त माना है। उनके विचार में उन्होंने उपन्यासों की रचना की हैं और कहानियों की भी। दोनों में ही उनकी समाजवादी दृष्टि रही है। ये सामान्य जन की वर्ग–चेतना से संबन्ध रहे हैं। मार्क्सवादी होने के कारण उनके उपन्यासों की कथा वस्तु समान्यतरू कृषकों, श्रमिकों आदि सर्वहारा वर्ग को लेकर चलती है। शोषकों के विविध रूपों में अपनाये जानेवाले हथकण्डों का भी जीवन्त चित्रण मिलता है। किन्तु यहाँ यह दृष्टव्य है कि उनकी यह दृष्टि मात्र अध्ययन प्रस्तुत ही न होकर अनुभूति के स्तर तक गहराई में पैठी हुई है। इसलिए कथानकों में प्रचारात्मकता की उपेक्षा वास्तविकता का पुट है[5]।

संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि श्री भैरवप्रसाद गुप्त ने देश के लोगों की गरीबी, पीड़ा, अभावग्रस्तता, समस्याएँ आदि को देखा है, परखा है, भोगा भी हैं। अपने इन्हीं निजी अनुभवों और व्यापक दृष्टिकोण के आधार पर अपने कथा–साहित्य में भारतीय जनता के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं, समस्याओं, विसंगतियों एवं प्रश्नों का और उससे उत्पन्न स्थितियों में देश के जनता के दैनिक जीवन में समस्याओं के साथ जूझने का, उनमें हो रहे परिवर्तन आदि का, बहुत ही आधिकारिकता और प्रामाणिकता से चित्रण किया है। भैरवप्रसाद गुप्त का संपूर्ण जीवन नवीन समाज की कल्पना कर, उसे साकार बनाने में व्यतीत हुआ है। उपन्यासों एवं कहानियों के माध्यम द्वारा, उन्होंने साम्यवादी समाज की स्थापना का संदेश दिया है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी, गुप्तजी ने, सतहत्तर वर्ष की अपनी लंबी जीवन यात्रा में हिन्दी साहित्य को कथा साहित्य के रूप में अथवा अन्य कृतियों के रूप में जो कुछ दिया वह पृष्ठों की दृष्टि से विपुल और नई दिशा तथा नव्य एवं भव्य पथ की दृष्टि से अद्‌भुत एवं महान है। हिन्दी साहित्य जगत के अमर साहित्यकार श्री भैरवप्रसाद गुप्त, हिन्दी साहित्य के ही नहीं, सम्पूर्ण भारतीय साहित्य की असाधारण सर्जानात्मक प्रतिभा के प्रतीक हैं और हिन्दी कथा साहित्य का अमिट हस्ताक्षर भी हैं।

संदर्भ

1. समाजवादी उपन्यासकार भैरवप्रसाद गुप्त, डॉ.सुनन्दा पालकर, पृष्ठ सं.35
2. वही, पृष्ठ सं.36
3. वही, पृष्ठ सं.38
4. वही, पृष्ठ सं.36
5. प्रगतिवादी हिन्दी उपन्यास, डॉ.बदरी प्रसाद, पृष्ठ.सं 46